**ओ३म्**

**‘सभी मनुष्य ईश्वर, ऋषियों, वेदमाता, माता-पिता,**

**आचार्यों, प्रकृति, गोमाता, स्वदेश के ऋणी हैं’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

सभी मनुष्य संसार के रचयिता ईश्वर व अपने माता-पिता के सबसे अधिक ऋणी हैं। इसके साथ ही वह भूमि माता, गोमाता, ऋषि व आचार्यों आदि के भी ऋणी हैं। जो मनुष्य अपने ऋणों को भली प्रकार जानता है वह धन्य होता है। जो अपने ऋणों को जानने के साथ उनसे उऋण होने का विचार करता है और उसके लिए वेद, ऋषियों के साहित्य व विद्वानों से उन ऋणों से मुक्त होने के विचार जानने के लिए प्रयासरत रहता है वह और अधिक योग्य व सच्चा मनुष्य कहा जा सकता है। आज के संसार पर दृष्टि डालें तो हमें प्रायः सभी मनुष्य उपर्युक्त ऋणों से अनभिज्ञ ही प्रतीत होते हैं और इसके साथ अशिक्षित मनुष्य तो कम परन्तु शिक्षित व्यक्ति अधिक अनाचार व कर्तव्यविमुख प्रतीत होते हैं। इसके लिए आवश्यकता है कि सभी धर्म प्रेमी शिष्टजन मनुष्यों के ऊपर ईश्वर व अन्य सभी ऋणों की चर्चा करते हुए उन ऋणों से मुक्त होने के उपायों का प्रचार कर देश की जनता का मार्गदर्शन करें तो समाज में जागृति आ सकती है ओर देश इस कार्य से स्वतः वेद की ओर अग्रसर हो सकता है।

 एक नवजात शिशु जब उत्पन्न होता है तो वह उपर्युक्त सभी ऋणों को लेकर पैदा होता है ओर कुछ ऋण उसके जन्म के साथ व बाद में भी उसके जीवन से जुड़ते जाते हैं व बढ़ते रहते हैं। प्रश्न किया जा सकता है कि ईश्वर का हमारे ऊपर क्या ऋण है। इसका उत्तर हमें यह प्रतीत होता है कि ईश्वर ने यह सृष्टि हम मनुष्यों व अन्य प्राणियों के सुख व जीवन निर्वाह के लिए बनाई है। सृष्टि में सूर्य, चन्द्र, पृथिवी सहित सभी लोक लोकान्तर, सृष्टि में उपलब्ध सभी प्रकार के अन्नादि पदार्थ व बहुमूल्य रत्न, वायु, जल व अग्नि आदि पदार्थ सम्मिलित हैं। इन सब पदार्थों को उत्पन्न करने के अतिरिक्त माता के गर्भ में हमारे शरीरों का निर्माण करने वाला भी वह ईश्वर ही है। यह शरीर कितना महत्वपूर्ण है इसका अनुमान हम शायद नहीं लगा सकते। यदि किसी व्यक्ति की एक आंख खराब हो जाये तो लाखों रूपया व्यय करने पर भी किसी अन्य मनुष्य से दूसरी आंख प्राप्त नहीं होती है। ऐसे ही शरीर के रोगी होने पर लाखों रूपये उपचार पर व्यय करने होते हैं और तब भी मनुष्य ठीक नहीं हो पाते व कईयों की तो मृत्यु भी हो जाती है। इन उदाहरणों से ईश्वर द्वारा हमें स्वस्थ शरीर देने के उपकार का अनुमान किया जा सकता है। ईश्वर हर क्षण हमारे साथ रहता है। वह अनन्त काल से हमारे साथ है अनन्त काल तक हमारे साथ रहेगा भी। हमारे पास भाषा व अन्य जो भी ज्ञान है उसका आदि कारण भी ईश्वर ही है। हमारी हिन्दी भाषा संस्कृत भाषा का विकार है और संस्कृत भाषा वैदिक संस्कृत का विकार है। वैदिक संस्कृत ईश्पर प्रदत्त भाषा है जो सृष्टि की आदि में परमात्मा ने वेदों के रूप में चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को शब्द, अर्थ व सम्बन्ध सहित प्रदान की थी। ईश्वर हमारी हर क्षण रक्षा भी करता है। यदि हमें कुछ मिनट प्राण वायु न मिले तो हमारा जीवन समाप्त हो जायेगा। वायु सहित अन्य अमृत तुल्य पदार्थ जल व अग्नि, अन्न व गोदुग्ध आदि की रचना भी परमात्मा ने हमारे लिए ही की है जिससे हमारा जीवन सुखी होने के साथ सुरक्षित रहता है। ऐसे ऐसे ईश्वर के अनेकानेक उपकार हमारे ऊपर हैं अतः हमें ईश्वर के इन उपकारों वा ऋणों के लिए हमेशा उसके प्रति कृतज्ञ रहते हुए उसका धन्यवाद एवं आभार व्यक्त करना चाहिये। इससे हमें ही लाभ होगा। यदि हम किसी से कोई लाभ प्राप्त करते हैं तो उसके प्रति कृतज्ञ होना एक गुण है। जो ऐसा नहीं करता व अकृतज्ञता का व्यवहार करता है, वह मनुष्य नहीं, कृतघ्न मनुष्य कहलाता है एवं उसे मूर्ख मनुष्य ही कहा जा सकता है। वेदों में ईश्वर के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए ईश्वरोपासना व योगाभ्यास आदि के संकेत मिलते हैं जिनके आधार पर महर्षि पतंजलि और महर्षि कपिल और महर्षि दयानन्द जी आदि ने पंचमहायज्ञविधि वा सन्ध्योपासना विधि, स्तुति-प्रार्थनोपासना के मन्त्र व विधि, योग दर्शन व सांख्य दर्शन आदि ग्रन्थों की रचना की है। इनके द्वारा हम ईश्वर के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने सहित उसका धन्यवाद कर उसके ऋण से किंचित उऋण हो सकते हैं।

 इसी क्रम में आदि कालीन, बाद के ऋषियों व आचार्यों की चर्चा करना भी समीचीन है। आदि ऋषियों ने परमात्मा से सर्ग के आरम्भ में वेदों का ज्ञान प्राप्त कर उसका प्रवचन आदि के द्वारा प्रचार किया। सृष्टि के आदि काल से ऋषि दयानन्द तक व उसके बाद आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा इस परम्परा को जारी रखा गया है। आज उन सभी ऋषियों व विद्वानों द्वारा अध्ययन अध्यापन की परम्परा के कारण हमारे पास चारों वेद उनके हिन्दी व अन्य भाषाओं के सत्यार्थ व भाष्यों सहित उपलब्ध हैं। ऋषियों ने समय समय पर वेद के विषयों को सरल भाषा में प्रस्तुत करने हेतु अनेक ग्रन्थों यथा दर्शन, उपनिषद, ब्राह्मण, मनुस्मृति, चरक व सुश्रुत रचित आयुर्वेदिक चिकित्सा ग्रन्थ, रामायण व महाभारत के इतिहास ग्रन्थ हम तक पहुंचायें हैं। वेद विषयक इतना साहित्य हमारे पास है कि मनपुष्य जन्म काल में उसे पूरा पढ़ा व पूरा जाना नहीं जा सकता। हम में जो ज्ञान व बुद्धि है उसका कारण ऋषि व विद्वानों की परम्परा ही कारण रही है। अतः संसार के सभी मनुष्य पूर्व के सभी ऋषियों व विद्वानों के ऋणी है। इनके प्रति आदर, सम्मान व कृतज्ञता का भाव व वर्तमान के जीवित विद्वानों की सेवा सुश्रुषा सहित इनका अन्न, जल, वस्त्र, सेवा व धन आदि से सम्मान करना सभी मनुष्यों का कर्तव्य है। प्राचीन समस्त साहित्य का अध्ययन करना भी हमारा सबका कर्तव्य है। ऐसा करके व उन सभी परम्पराओं को आगे बढ़ाकर ही हम ऋषियों व विद्वानों के ऋणों से उऋण हो सकते हैं। यदि ऐसा नहीं करते तो हम उनके ऋणी रहेंगे और इस ऋण का प्रतिकूल प्रभाव हमारे वर्तमान व भावी जीवनों पर भी पड़ सकता है। हमने वेदमाता के ऋण को भी लेख के शीर्षक में सम्मिलित किया है। वेद ने ही संसार को बोलना व समझना सिखाया अर्थात् आज संसार में जितना भी ज्ञान है वह सब वेदों का ही विस्तार व प्रकाश है। हमें वेद ज्ञान का अध्ययन व प्रचार कर उसके ऋण से भी उऋण होना है। नहीं करेंगे तो हमारी वर्तमान व भावी पीढ़ियां इससे वंचित हो जायेंगी और फिर मध्यकाल जैसा अन्धकार का युग पृथिवी पर आ सकता है, इसकी पूरी पूरी सम्भावना है। ऐसा न होने देना हमारा कर्तव्य व धर्म है।

 माता-पिता का हम सभी पर ऋण है। उन्होंने हमें जन्म दिया, पालन पोषण किया, हमें भाषा व बुद्धि दी, हमें विद्यालयों एवं आचार्यों के माध्यम से ज्ञान प्रदान कराया। हमारे सुख व पोषण के लिए अनेक कष्ट व दुःख उठाये, अतः उनका हमारे ऊपर ऋण है। इसे भी हमें उनका सेवा, आज्ञा पालन, सदाचरण व सद्व्यवहार से चुकाना है। उनके लिए अच्छे भोजन, वस्त्र व निवास की सुविधा उन्हें देनी है। उनके साथ प्रातः व सायं कुछ समय बातचीत द्वारा व्यतीत कर हम इस ऋण से उऋण हो सकते हैं। आचार्यों की बात करें तो आचार्य वह होता है जो ज्ञान प्राप्ति कराने सहित हमें सदाचरण की शिक्षा देता है। वह स्वयं भी सदाचारी होता है। उसे हम वेदों का आचार्य व आचरण करने वाला आदर्श मनुष्य भी कह सकते हैं। आचार्य जन्म से उत्पन्न सभी विद्याहीन-शूद्र मनुष्यों को विद्या प्रदान करके मनुष्य ज्ञान के प्रचारक, बल सम्पन्न व अन्याय को दूर करने वाले, वाणिज्य कार्यों के मर्मज्ञ व उससे समाज को सुख पहुंचाने वाले तथा ज्ञान से युक्त सेवा करने वाले मनुष्य प्रदान करते हैं। इन गुणों से सम्पन्न शिक्षित समाज ही श्रेष्ठ समाज व देश बनता है व मनुष्य ज्ञान सम्पन्न होकर अधिकाधिक सुख का अनुभव करते हैं। ज्ञान व आचार से हीन मनुष्य पशु से भी बदतर होता है। अशिक्षित मनुष्य का विज्ञ समाज में आदर नहीं होता। आचार्य ही विद्याहीन मनुष्य को सच्चा ज्ञानी मनुष्य बनाकर उसका ईश्वर व आत्मा से परिचय व उनके यथार्थ स्वरूप को प्राप्त कराते हैं। वेद ज्ञान व भौतिक विद्याओं से सम्पन्न सदाचार युक्त जो युवा पीढ़ी को ज्ञानवान बनाने का कार्य करते हैं वह वास्तविक आचार्य होते हैं। ऐसे आचार्यों का भी हम पर ऋण होता है। इस कारण हमें उन्हें अन्न, वस्त्र, धन, सद्व्यवहार व सेवा द्वारा प्रसन्न करना होता है। यही इनके ऋण से मुक्त होने के लिए किया जाने वाला यज्ञ होता है।

 संसार के सभी मनुष्य इस प्रकृति वा सृष्टि के भी ऋणी है। इसी के पदार्थों से हमारा शरीर बना है। प्रकृतिस्थ वायु व जल से ही हमारा पोषण होकर हम जीवित रहते हैं व सुख पाते हैं। निवास व खड़े होने के लिए हमें पृथिवी का ही आधार मिलता है। वस्तुतः प्रकृति व भूमि भी हमारा पालन करने में सहायक होने के कारण हमारी माता के समान ही है। इसके प्रति भी हमारे हृदय में सम्मान एवं गौरव की भावना होनी चाहिये। कोई इसके प्रति कोई अपमानजनक शब्द कह दे ंतो उसके प्रति यथायोग्य व्यवहार कर उसका तिरस्कार किया जाना चाहिये। हम भूमि माता का वन्दन करें। जो वन्दन नहीं करते उन्हें भारत भूमि पर रहने, यहां श्वांस लेने व जल का सेवन करने का अधिकार नहीं होना चाहिये। मनुष्य गोमाता का भी बहुत ऋणी है। गोमाता का दुग्ध व इससे बने पदार्थ हमारे लिए अमृत तुल्य उपयोगी व लाभप्रद हैं। गाय का चर्म भी हमारे पैरों की रक्षा करता है। गाय का गोबर व गोमूत्र भी अन्न उत्पादन में खाद व कीटनाशक के रूप में प्रमुख सहायक हैं। गो का स्थान माता के समान ही महत्वपूर्ण है। वेदों ने गो की महिमा गाई है। गोरक्षा हम सभी मनुष्यों का धर्म है और ऐसा न करना पाप है। गोहत्यारे व गोमांस भक्षक मनुष्य नहीं कहे जा सकते। मनुष्य उसे ही कह सकते हैं जो किसी भी प्राणी को अकारण कष्ट न होने दे। गोहत्यारे व गोमांसाहारी अकारण गोमाता को कष्ट देते हैं, उसका प्राणहरण करते हैं जो मनुष्य की हत्या से कम पाप नहीं है। हमारा समाज व देश के कानून भले ही ऐसे लोगों को दण्ड न दें, परन्तु ईश्वर का दण्ड तो निश्चित रूप से इन्हें मिलता ही है। गो-पूजा हमारा कर्तव्य है। उसे हम गो पालन कर, अच्छा चारा खिलाकर, उससे प्रेम करके व उसे समस्त कष्टों से मुक्त करके कर सकते हैं। ऐसा करके हम गोभक्त व गोरक्षक बनते हैं व गोमाता के ऋण से मुक्त होते हैं।

 स्वदेश भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर होती है। स्वेदश के कारण ही हमें नाना प्रकार के सुख व गौरव की अनुभूति होती है। देश का नागरिक होने से हमें अनेक प्रकार के अधिकार प्राप्त होते हैं। हमारा शरीर इस देश के अन्न, फल, वायु, जल आदि से ही बना है। हमें स्वदेश को भी भूमि माता मानकर इसका सम्मान व इसके प्रति कृतज्ञ रहना चाहिये। ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिये जिससे समाज व विश्व में देश की अप्रतिष्ठा हो। इसे ही भूमि माता व स्वदेश भक्ति कह सकते है। भूमि माता के प्रति सम्मान व सर्वस्व त्याग की भावना रखकर हम स्वदेश के ऋण से भी उऋण हो सकते हैं।

 देश व समाज के निर्माण में वेदों का अध्ययन व अध्यापन कराने वाले गुरुकुलों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। यदि यह गुरुकुल और यहां सदाचार व वेद ज्ञानी आचार्य न हो तो हमारा धर्म व संस्कृति नष्ट हो सकते हैं। गुरुकुल, उसके आचार्य और यहां पढ़ने वाले ब्रह्मचारी वस्तुतः ईश्वर प्रदत्त सत्य धर्म व सत्संस्कृति के रक्षक हैं। इनके प्रति भी हमारे भीतर श्रद्धा का भाव होना चाहिये और इनकी अन्न व धन आदि से भरपूर सहायता करनी चाहिये। गुरुकुल, इसके आचार्यों व ब्रह्मचारियों का भी कर्तव्य है कि वह अपने सदाचरण, विद्याग्रहण व उसके प्रचार से देश व वैदिक धर्म को श्रेष्ठता तक ले जावें। आज की युवा पीढ़ी विदेशी पाश्चात्य सभ्यता से अधिक प्रभावित हो गई है और उसने वेदों के उदात्त गुणों व आचरणों को त्याग दिया है। उनमें न ईश्श्वर के प्रति, न वेद के प्रति, न वेदाचार्यों के प्रति और न माता-पिता व स्वदेश के प्रति ही प्रेम, श्रद्धा व आदर की भावना है। यह देश व समाज के लिए अनिष्ट की स्थिति है। आर्य परिवारों की सन्तानों को भी हम आर्य संस्कारों से दूर देख कर दुःखी होते हैं। आधुनिकता व समय का कुछ ऐसा प्रभाव है कि आज किसी को वैदिक धर्म की श्रेष्ठता के बारे में बतायें तो कोई सुनने व मानने को तैयार ही नहीं है। उनके दिल व दिमाग में पाश्चात्य सभ्यता की बुराईयां गहराई से भर गई हैं। ऐसे लोगों में वेदों के प्रचार व प्रसार की महती आवश्यकता है। यदि युवा पीढ़ी आर्यसमाज से दूर होती है तो इसका बुरा परिणाम देश व वैदिक धर्म के भविष्य पर हो सकता है। इस पर गम्भीर चिन्तन कर उपाय ढूंढे जाने चाहिये।

 वैदिक धर्म व संस्कृति में सभी मनुष्यों पर तीन ऋण बताये व माने जाते हैं जिन्हें ऋषि ऋण, देव ऋण व पितृ ऋण के नामों से जाना जाता है। उसी को स्मरण कराने के लिए विप्र व द्विज सभी आर्य यज्ञोपवीत धारण करते हैं जिसके लिए उन्हें सन्ध्या व अग्निहोत्र सहित पंच महायज्ञों को करना आवश्यक होता है। यह बात अलग है कि आज सभी लोग ऐसा नहीं करते। महाभारत काल व पूर्व काल में वैदिक धर्म व संस्कृति का देश विदेश में प्रचार था। तब यज्ञोपवीत से जुड़े आवश्यक कर्तव्यों का सभी लोगों के द्वारा पालन किया जाता था। आज आर्यसमाज से सक्रियता से जुड़े हुए लोग यज्ञोपवीत धारण करते हैं और उपर्युक्त सभी ऋणों से परिचित भी है और इसके निवारणार्थ वेदों व ऋषियों के ग्रन्थों का स्वाध्याय, देव व पितृ यज्ञ कर इससे उऋण होने का प्रयत्न करते हैं। इमने इन ऋणों की चर्चा करते हुए जो बातें लिखी हैं उनका आधार तर्क एवं युक्तियां हैं और यह मानव धर्म के अंग हैं। उनका यदि सभी मनुष्य पालन करें तो देश व समाज उन्नति के शिखर पर पहुंच सकते हैं। वैदिक धर्म का उद्देश्य भी यही है। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001/फोनः09412985121**